ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-12* January- 2018
Innovation The Research Concept

सरला अग्रवाल के उपन्यासों में स्त्री विमर्श

हिमानी भाटिया
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
राजकीय स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय,
बाँरा, राजस्थान

सारांश

डॉ.सरला अग्रवाल का नाम हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में ख्याति प्राप्त कर चुका है। इनकी लगभग 34 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। डॉ.सरला अग्रवाल अपने उपन्यासों के माध्यम से साहित्यकार समाज के यथार्थ का चित्रण करने में सफल हुयी हैं। इनका उपन्यास आज अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच गया है। प्रतिवर्ष सहस्त्रों की संख्या में प्रकाशित होने वाले हिन्दी उपन्यासों का घेरा इतना विशाल है कि प्रेम, अपराध, जासूसी और विशुद्ध सेक्स को लेकर आकाश–पाताल मिला देने की काल्पनिक उड़ानों से लेकर जीवन की घोर यथार्थताओं, राजनितिक, सामाजिक और आर्थिक वंचनाओं धार्मिक, साम्प्रदायिक, कृत्रिम आंडबरों, पाखण्डों और रिसते घावों पर नमक छिड़कने की विडम्बनाओं तथा कहीं–कहीं निमूर्ल यूटोपियाओं तक सभी इसके अन्तर्गत समा सकते हैं।

मुख्य शब्द : साहसिक, सामाजिक, आधुनिक, दाम्पत्य जीवन।

प्रस्तावना

डॉ.सरला अग्रवाल महिला होने के नाते नारीमन को उसके प्रतिदिन के संघर्ष को भली प्रकार समझती हैं। नारी मन का अर्न्तद्वन्द्व उनकी रचनाओं के प्रति श्रृद्धा जगाता है। उनके नारी पात्रों में समझदारी और स्वभाविकता है। कहीं–कहीं साधारण वातावरण में रहकर भी नारी अपनी बुद्धि, अपने विवेक तथा अपने स्वाभाविक निर्णय से बुद्धिहीन पुरूष को सुधार लेती है। कहीं नारी में त्याग व निःस्वार्थ सेवा की भावना व्यक्त हुई है तो कहीं नारी का आदर्श रूप चित्रित हुआ है। डॉ.सरला अग्रवाल ने तीन उपन्यासों की रचना की है, एक कतरा धूप, अनुमेहा, तुम ऐसे तो न थे। इन उपन्यासों में उन्होंने आधुनिक जीवन की ज्वलंत समस्याओं को चित्रित किया है।

अध्ययन का उद्देश्य

हिन्दी उपन्यास की समकालीन प्रवृत्तियों में उन जीवंत औपन्यासिक शैलियों को लिया जा सकता है जिनमें आज के उपन्यासकार रचना कर रहे हैं। आज का उपन्यास जीवन के अधिक निकट आ चुका है। उपन्यासकारों की परम्परा में डॉ.सरला अग्रवाल का नाम भी उल्लेखनीय है उन्होंने लेखिका के रूप में भी सभी विधाओ, सभी विषयों पर गहनता से चिंतन किया और परिष्कृत भाषा में बहुत लिखा। और इनके पात्र आज के जीवन्त पात्र हैं।

साहित्यावलोकन

अनुमेहा एक ऐसा साहसिक उपन्यास है जो तनावपूर्ण और असफल दाम्पत्य जीवन का क्रान्तिकारी समाधान प्रस्तुत करता है। अनुमेहा की कहानी एक उच्चवर्गीय लड़की, “अनुमेहा” की है जो अति सुन्दर व गुणवती है, उसके माता–पिता उसका विवाह उसकी इच्छा के विपरीत एक मध्यम वर्गीय परिवार के लड़के जनार्दन से कर देते हैं। जनार्दन की माँ इतनी रूपवती, गुणवती व आज्ञाकारिणी बहू पाकर अत्यन्त गदगद है, जिसने आते ही सारे घर का काम–काज स्वयंमेव संभाल लिया। लेकिन सास को कुछ ही समय पश्चात पता चलता है कि उनकी संस्कारो वाली बहु उनके पति को कोई सुख नहीं दे पा रही है। वह अपनी बहू के बर्ताव को ठीक करने की हिदायत देती है किन्तु अनुमेहा के व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आता है। क्योंकी अनुमेहा के मन में तुफान है। एक ओर प्रिय की ओर सहज भाव से उमड़ता हुआ हृदय जो कहता है उठो, उसका स्वागत करो, इतना सुनहरा अवसर यो ही मत गवा दो। दूसरी ओर उसके संस्कारों की बेड़ियो उसे ऐसा नहीं करने देती। “सामाजिक प्रतिबन्धों के नाम पर मन को संयमित रख, प्रतिपल अपने अनन्य प्रेम को हृदय में दफनाते हुए, जीवन साथी के प्रति साहचर्य धर्म निभाते रहना आह! यही तो वास्तविक जीवन का दंश है? सहानुभूति और दया की पृष्ठभूमि में आशाओं, अपेक्षाओं, दबावों ओर न जाने कितने हादसों के उतार–चढ़ाव की कहानी है अनुमेहा।”[1]

डॉ. सरला अग्रवाल ने अपने उपन्यासों में नारी जीवन के विभिन्न पक्षों को उजागर किया है अनुमेहा उपन्यास भारतीय दाम्पत्य जीवन तथा समाज पर नये मूल्य स्थापित करके प्रश्न चिन्ह उपस्थित करता है। अनुमेहा अपना प्रेम प्रारम्भ से ही प्रेमी के नाम कर देती है। इस स्थान पर दाम्पत्य जीवन पर नवीन प्रश्न उपस्थित होते हैं। अनुमेहा के सम्पूर्ण समर्पण न होने के कारण उपन्यास में दाम्पत्य जीवन छिन्न–भिन्न हो जाता है। अनुमेहा, जनार्दन के प्रति विद्रोहिनी हो जाती है। उपन्यास में प्रत्यक्ष रूप से देखने पर ऐसा ज्ञात होता है कि अप्रत्यक्ष रूप से अनुमेहा के ह्रदय में अपने प्रेमी के लिए जो स्थान है, वहाँ दोनों के अर्न्तमन व आत्मा में एक दूसरे को नहीं भूला सकते थे। ऐसी स्थिति में अनुमेहा एक आत्महता व क्षुब्ध नारी का जीवन व्यतीत करने लगती है। इसी का चित्रण सरला अग्रवाल ने प्रस्तुत अवतरण में किया है –

दाम्पत्य जीवन में विरह का चित्रण

"अनुमेहा के जाने के पश्चात जनार्दन उदास भाव से अपने कमरे में जाकर पलंग पर लेट गया, उसका रोम–रोम रूंआसा हो उठा, उस छत के नीचें व्यतीत किए गए किए चार माह के चित्र बरबस उसकी आँखों में लहराकर उसे सम्मोहित करने लगे, अनुमेहा जो प्रत्येक कोण से उतनी ही सुन्दर उतनी ही प्यारी उतनी ही कोमल, उतनी ही आनंदमयी लग रही थी, मानों शताब्दियों से अजंता, एलोरा में उकेरी कोई हँसती, इठलाती नवयौवना वहाँ से उठकर बरबस चली आई हो।"[2]

सरला अग्रवाल ने उपन्यास अनुमेहा में वैवाहिक जीवन में किसी तीसरे के प्रवेश के कारण आई त्रासदियों का चित्रण किया हैं। उन्होंने अपने उपन्यास में चिन्ताग्रस्त सोमवती (सास) के हृदय का भी चित्रण किया गया है :–

"उद्विग्नता इतनी बढ गई थी कि सोमवती घर में न ठहर सकीं, वह बाहर निकल आयी। बाहर झूले पर जा बैठी, उनका मन भी तो झूले सा ही अनमना हो आया था, अस्थिर पिंजरे में बंद पक्षी सा व्याकुल, चीत्कार करता पर जिसे बाहर निकलने की कोई राह नहीं, केवल सीखंचों से बाहर झांकते रहा जा सकता है– और आने–जाने वाले समय को चुपचाप झेलते रहना अपनी नियति मान लेना होता है। नहीं, नहीं... वह इस प्रकार असहाय होकर यह सब होते नहीं देख सकेंगी, प्रयत्न करने पर हर उलझन को सुलझाया जा सकता है, अपने मन को सांत्वना देते हुए वे ईश्वर का नाम मन ही मन जपने लगी।"[3]

अनुमेहा के प्रस्तुत अवतरण में लेखिका ने एक माँ की मन स्थिति का चित्रण किया है। अपने पुत्र व पुत्र वधू के बीच प्रेम व सांमजस्य की स्थिति न पाकर उनका हृदय क्षुब्ध हो उठता है। कोई भी सुख उन्हें खुशी प्रदान नहीं करता। मन में झंझावत सा हो रहा है। वह नहीं चाहती थी कि इस स्थिति को वह चुपचाप देखती रहें और इसलिए वह मन ही मन में यह प्रण करती है कि वे असहाय होकर देखने की अपेक्षा किसी भी प्रकार इस स्थिति को सुलझाने का प्रयास करेंगी।

सरला जी ने यह भी दर्शाने की कोशिश की है कि रिश्तों की डोर बहुत नाजुक होती है, जरा सी ढील या जरा सा कसने पर टूट सकती है, इसलिए रिश्तों को सुलझाने में मानसिक संबल की आवश्यकता होती है।

डॉ. सरला अग्रवाल के उपन्यास के प्रस्तुत अवतरण में अनुमेहा की मनोस्थिति का चित्रण लेखिका ने अत्यन्त सूक्ष्मता व गहराई के साथ किया है। सम्पूर्ण जीवन में जिसे अनुमेहा ने चाहा था, आज वही उसके समक्ष खडा है तब भी वह पसोपेश में पड़ जाती है। उसका अर्न्तमन तो उसे कहता है कि वह जाए और अभिषेक से मिले, लेकिन उसके संस्कार, उसके रिश्तों के बंधन, यह स्वीकार नहीं करते। इसलिए वह दुविधा में पड़ जाती है। यह भारतीय संस्कार ही हैं जो नारी को कुछ भी अनुचित नहीं करने देते। सरला अग्रवाल सम्पूर्ण उपन्यास में पात्रों के अर्न्तजगत का विश्लेषण करती है। पात्रों के मनोजगत् में विचरण करने, उनके मनरूप की अतल गहराइयों में डुबकी लगाने में अत्यन्त प्रवीण है। इस प्रवृत्ति का प्रमाण है अभिषेक के अनुमेहा–जनार्दन के घर आने पर अनुमेहा की मनः स्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण जो उनके उपन्यास में देखा जा रहा है।

सामाजिक उपन्यास (एक कतरा धूप)

"एक कतरा धूप" सरला अग्रवाल की एक समाजिक परिदृश्य पर लिखी गई सशक्त रचना है।" सरला अग्रवाल का उपन्यास "एक कतरा धूप" समाज में विद्यमान बहुत सारी समस्याओं और बुराइयों पर विजय प्राप्त करने की कहानी है। इस उपन्यास की मुख्य पात्र नारी है, जो सारे समाज और आस–पास के परिवेश को सुधारने का कार्य करने को तत्पर दिखाई देती है। सामाजिक संदर्भों और बदलते युग की नयी विचारधारा को प्रस्तुत कर नारी शोषण के विरूद्ध स्वर ऊँचा करने में सरला अग्रवाल सिद्धहस्त रही हैं। अपने पात्रों के माध्यम से उन्होंने हृदय की ममता, आत्मीयता और उत्कृष्ट त्याग के सजीव चित्र खीचें हैं प्रेमचन्द जी के अनुसार।

"सरला जी के उपन्यासों में चाहे विचार योग्य मनोवैज्ञानिक गुत्थियाँ" हों, सामाजिक या पारिवारिक विकृतियाँ हो अथवा युग में चलती आ रही रूढ़ियों के प्रति टकराव हो, उनका विशाल व्यक्तित्व, अनुभव और मौलिक सूझ–बूझ स्पष्ट परिलक्षित होती है।"[4]

डॉ.सरला अग्रवाल की रचनाओं में "स्त्रीविमर्श" के विविध आयाम दिखलाई पड़ते है। सरला अग्रवाल द्वारा लिखित उपन्यास "एक कतरा धूप" 1999 में प्रकशित हुआ। इसमें एक परिवार का आख्यान है। इसमें पारिवारिक विवरण और बनते–बिगड़ते रिश्तों के चित्रों के मध्य महिमा और गौतम का प्रेम पर्याप्त आकर्षण लिए हुए है।

एक कतरा धूप डॉ.सरला अग्रवाल की एक सामाजिक परिदृश्य पर लिखी गई सशक्त रचना है। जीवन के चारों ओर तिमिर घिरा हुआ हो तो मात्र "एक कतरा धूप" का अहसास उस अधंकार से सामना करने की शक्ति जुटा देता है।

डॉ.सरला अग्रवाल "एक कतरा धूप" में नारी के साथ जुड़ी समस्याओं का मनोवैज्ञानिक पहलू सामने रखा है जैसे :– अपने पति के दुर्व्यसनों से नाराज महिमा उसे फटकारते हुए कहती है –"तुमने" ये ताश का लफड़ा क्यों पाल लिया है, यह कह कर महिमा खूब चिल्लाई। न खाने का होश ना पीने का, जब देखों तब ताश–ताश।"[5]

उपन्यास में महिमा घर की जिम्मेदारियों के साथ–साथ ताश का व्यसन, शराबखोरी, नशे की प्रवृति आदि समस्याओं से भी जूझती नजर आती है। अपने पति मोहित को पसीने की मेहनत से कमाई दौलत को पानी तरह बहाते देख वह बहुत दुःखी हो जाती है। वह मोहित को सही रास्ते पर लाने के हर सम्भव प्रयास करती है। महिमा का चरित्र उपन्यास में एक आदर्श नारी के रूप में व्यक्त हुआ है जो अपने सभी पारिवारिक दायित्वों को निभाते हुए स्वयं को समाज के सुधार हेतु प्रयत्नशील है। नारी मन की व्यथा, बेबसी व छटपटाहट के साथ नारी उत्पीड़न की समस्या को प्रस्तुत करने के साथ ही डॉ. सरला अग्रवाल ने समाज में व्याप्त जुआ, शराब आदि बुराइयों को प्रस्तुत किया है। परिवार के सभी सदस्यों को सुधारने के प्रयत्न में महिमा निरन्तर प्रयासरत है।

"अच्छा होगा कि हम लोग कभी इस विषय पर कोई बात न करें..... चार नशा मुक्ति शिविर क्या लगा लिये तुमने, खुद को नशेड़ियों का खुदा ही समझने लगी हो। हमें हमारे ही हाल पर छोड़ दो तुम......।"[6]

इस उपन्यास में डॉ.सरला अग्रवाल ने महिमा को पूरे उपन्यास में सभी परिवार के सदस्यों के प्रति एकनिष्ठता से तत्पर होते दिखाया है।

इलियट के अनुसार

"जब परिवार अपना कार्य बंद कर देता है, जब संस्कृति–दान से मुँह मोड़ लेती है, तब संस्कृति का अधःपतन होने लगता है।"

इलियट के इस विचार के अनुसार एक आदर्श परिवार ही उचित रूप में संस्कृति बना सकता है तथा शिष्ट दम्पति ही आदर्श परिवार का निर्माण कर सकते हैं और उसे अच्छे जीवन के योग्य बना सकते हैं।

संस्कृति का विकास समाज में व्यक्ति के आदन–प्रदान से होता है, जिस प्रकार एक गृहस्थी में एक परिवार का विकास दम्पति के पारस्परिक सहयोग एवं दान–प्रदान से होता है। दोनों के पारस्परिक सहयोग के अभाव में दोनों के संबंधों के बिगड़ने की संभावना रहती है।

भारतीय संस्कृति में संस्कारों का बहुत बड़ा महत्व रहा है। इनके अनुसार दम्पत्ति को त्याग, तप, संयम के मर्यादा की शिक्षा दी जाती है। किंतु पश्चिमी संस्कृति त्याग तप और संयम के स्थान पर अधिकार, भोग एवं वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर बल देने के कारण भारतीय दामपत्य में विघटन प्रस्तुत करने लगी।

एक कतरा धूप डॉ.सरला अग्रवाल का सामाजिक चरित्र प्रधान, समस्या मूलक, दुखान्त–सुखान्त की मिश्रित अनुभूति देने वाला एक प्रसादान्त उपन्यास है।

जीवन में चारों ओर तिमिर धिरा हुआ होतो मात्र "एक कतरा धूप" का अहसास उस अधंकार से सामना करने की शक्ति जुटा देता है। उपलब्धि की सम्पूर्णता ही जीवन को पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक नहीं हैं, मुट्ठी भर सुख या उजास का एक कतरा भी मनुष्य को उसके लक्ष्य तक ले जाने में सहायक होता है। आज अंधेरे में घिरा हुआ है व्यक्ति भी, समाज भी। अंधेरे अपने–अपने हैं। पर कुछ ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जिन्हें या तो धूप की तलाश होती है या जो समाज में फैले अंधकार को दूर करने लिए स्वयं एक कतरा धूप बन जाते हैं।

आधुनिक उपन्यास

यह उपन्यास 2008 में प्रकाशित आधुनिक उपन्यास है। इस उपन्यास की कथा परिधि में अनेक पारिवारिक रिश्तों के पारस्पारिक संबंधों के सूत्र गुँथे हुए हैं, किन्तु इसके केन्द्र में विशाल और शालिनी के दाम्पत्य जीवन और दाम्पत्य संबंध के जुडते–बिखरते सूत्र रचित हैं।

"तुम ऐसे तो न थे" उपन्यास की प्रमुख पात्र शालिनी न तो दलित न ही दलित–दमित पात्र है और न ही अभिजात्य संस्कृति से संयुक्त उच्चवर्गीय ऐश्वर्यशाली पात्र है वरन् वह उच्च मध्य वर्गीय धरातल की कर्मठ तथा सांस्कृतिक एंव चेतना से सम्बद्ध चिंतनशील नारी है। वह दाम्पत्य जीवन की सार्थकता "प्रेम" ओर आपसी सामंजस्य को बनाए रखने में मानती है। वह हर संभव दाम्पत्य जीवन एवं उससे जुडे सरोकारों में सम्न्वय बनाने एवं बनाये रखने की चेष्टा करती है।

जुड़ते बिखरते दाम्पत्य संबंधों से पूरित ये उपन्यास पूर्णतयाः पारिवारिक उपन्यास है। मधुर एवं कटु संबंधों की तिरूकता सम्पूर्ण उपन्यास को बांधे रखती है, जो समाज का भयावह एवं कटु यथार्थ पेश करती है।

परिवार भारतीय समाज का एक महत्वूपर्ण अंग है परिवारों से ही समाज बनता–बिगड़ता है और समाज सुंसगठित रहेंगे तो राष्ट्र भी शक्तिशाली बना रहेगा।

डॉ. सरला अग्रवाल ने उपन्यास में न सिर्फ दाम्पत्य जीवन के मधुर व कटु उदा को पाठकों के समक्ष रखा है बल्कि समाज की प्रचलित बुराईयों, कुरीतियों व अव्यवस्थाओं के साथ–साथ भारतीय समाज की सांस्कृतिक गरिमा, परम्पराओं आदि की विस्तृत व्याख्या उपन्यास "तुम ऐसे तो न थे" में भी किया है।

"यह हमारा देश भारत है न माँ, जहाँ लड़के वालों को सारे अधिकार होते हैं। उन्हें न लड़की की भावनाओं की परवाह होती है और न ही उसके माता–पिता की, जैसे व्यक्ति, बरतन–भॉण्डे, फ्रीज–टीवी जेसी वस्तुएं खरीदता है। खूब ठोक–बजाकर, दुकान–दुकान घूम कर, मोल–भाव करके। अरे दीदी, ये खरीदते कहाँ है? ये तो पढ़ी–लिखी सुन्दर, शालीन कमाऊ लड़की छांट कर लाखों में एक लेते हैं। साथ में मनचाहा धन, दहेज और सामान माँगते है, मानो उस बेकार पड़ी वस्तु को जीवन भर, अपने घर में रखने का स्थान देने की कीमत वसूल रहें हो।"[8]

भारतीय समाज पुरूष सत्तात्मक है। प्रारम्भ से ही स्त्रियों को घर की चार–दीवारी में कैद किया गया, पुत्री जन्म पर मातम व पुत्र जन्म पर उत्सव भारतीय समाज की परम्परा रही है। आज भी पुत्र के माता–पिता सिर उठाकर जीते हैं जैसे कि उन्होंने कोई विशेष कार्य किया है। युगों–युगों से पुरूष के अंह से संत्रस्त उसकी पग–पनही अथवा पद त्राण स्त्री के हृदय में आज भी घुटन और एक मूक वेदना ही आयी है। तिनके–तिनके सँवारने में वह अपना मानस–नीड़ तो खोखला ही कर देती है, सामाजिक घरोदों को भी तितर बितर ही पाती और अंत में एक घायल पक्षिणी सी अपमान के बाण से क्षत–विक्षत अपने पंखो को निहारती है।

इनके उपन्यास में भारतीय समाज की कुप्रथाओं का चित्रण भी किया गया है :–"गाँव में तो बाल–विवाह होते हैं, दो तीन साल तक के बच्चों की शादियाँ आपस में तय करके रस्म बहुत कम खर्चे में पूरी कर ली जाती है.... जब बच्चे युवा हो जाते हैं तब गौना होता है.. यदि लड़की को ससुराल का वातावरण नहीं समझ आता तो वह उसके मायके वापस आ जाती है। साल दो साल में उसे किसी के नाते बिठा दिया जाता है... पर लड़के वालों से मनचाही रकम लेकर ही.... यह रकम लड़की के स्वास्थ्य, सुगठित शरीर और सौंदर्य को देखकर तय की जाती है... आदि काल में तो सुंदर औरतों के लिए तो बड़े–बड़े" युद्ध होते थे।"[9]

इस उपन्यास में विवाह, परिवार, संस्कार प्रथाओं– कुप्रथाओं आदि सभी का समावेश कर लेखिका ने इसे विशुद्ध सामाजिक उपन्यास बनाया है लेकिन यह उसकी अतल स्पर्शिनी कलम का ही कमाल है कि अपने छोटे से कलेवर में यह उपन्यास सभी स्थितियों पर प्रकाश डालता है। भारतीय समाज में विवाह व रिश्तों की गरिमा का चित्रण :–

"यही बात सुनने के लिए शालिनी के कान तरस रहे थे, नेत्रों में मातृत्व की उजास झलक उठी... गदगद हुए कण्ठ व नम् नेत्रों से पूछा... सच–सच बताना हेमा, तुझे लड़का अपने मन से पसन्द है ना विवाह का अर्थ है पति पत्नी का जन्म जन्मांतर का साथ। यह साथ केवल शारीरिक इंद्रियों की तृप्ति के लिए नहीं परस्पर शरीर व मन को एकाकार करने का बंधन है। दोनों के लिए जीवन साथी के प्रति निःस्वार्थ भाव होना जरूरी है, क्योंकि प्रेम उत्सर्ग से परिपूर्ण होता है।"[10]

निष्कर्ष

डॉ.सरला अग्रवाल जी प्रौढ लेखनी से निःसृत एक–एक वाक्य मानव मात्र को आन्दोलित करने में ही नहीं अपितु सभी स्थितियों का समावेश प्रस्तुत करने में भी सिद्धहस्त है। जहाँ एक ओर नारी प्राचीन कालीन नारी व वैदिक काल की नारियों के गौरवपूर्ण इतिहास का चित्रण कर समाज में उनके आर्थिक व नैतिक स्वरूप का वर्णन किया है, वहीं आधुनिक समाज में अठारहवीं शताब्दी से लेकर स्वतनत्रता प्राप्ति के बाद तक की नारी की विकृत स्थिति का भी चित्रण किया है। भारत की सांस्कृतिक परमपरा अत्यन्त प्राचीन है और उस धरोहर के इतिहास का विस्तृत अध्ययन करके ही लेखिका ने उसे अपने शब्दों में बयान किया है। नारी प्रधान उपन्यासों में इनके उपन्यास महत्पूर्ण स्थान के अधिकारी हैं चूँकि नारी परिवार की केन्द्र है, वह परिवार को तोड़ने में सहायक भी हो सकती है, किन्तु जब वह अपने सद्चिंतन और कर्मव्यता तथा सद्व्यवहार से परिवार में अपनी भूमिका निभाती है, तो परिवार को एक सूत्र में बाँधकर अपनी मजबूती को प्रस्तुत करती है। सरला अग्रवाल एक संवेदनशील एवं कल्पनाशील सशक्त रचनाकार है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *अनुमेहा (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–21*
2. *अनुमेहा (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–25*
3. *अनुमेहा (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–30*
4. *व्यक्तित्व की रंग कृतित्व की रेखाएँ (डॉ.प्रेमचंद) पृ.स. –205*
5. *एक कतरा धूप (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–46*
6. *अनुमेहा (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–48*
7. *नोटस ट्वर्ड्स आफ कल्चर (टी.एस.इलियट) पृ.स.–21*
8. *तुम ऐसे तो न थे (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–193*
9. *तुम ऐसे तो न थे (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–194 राजकीय स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय*
10. *तुम ऐसे तो न थे (डॉ.सरला अग्रवाल) पृ.स.–197*